THE ECONOMIC TIMES

Date: 13-06-16

For Indian cyber security capability

China is the number one source of online attacks generically called `distributed denial of service (DDoS)' -which swamp internet servers with automated garbage and render them useless.

Numbers published on this page last Wednesday make China the number one source of online attacks generically called `distributed denial of service (DDoS)' -which swamp internet servers with automated garbage and render them useless.

So what? This is not a plaything, like an attack on a news portal you refer to everyday or, more seriously , a block on your email provider. Such attacks, in an age when instruments of espionage, statecraft and even warfare are becoming ever more dependent on information technology , are tools that can be used to disable weapons and cripple the financial system. India has to take resolute action against cyber attacks.

Israel has emerged as a leader in developing cyber security tools. There is no reason why Indian you ngsters cannot develop indigenous capa bility in cyber defence and attack. Instead of chasing some form of e-commerce or the other, startups can be incentivised to take up well-defined defence-sponsored projects to find solutions to known and unknown problems.

New Delhi prides itself on its `demographic dividend' -an army of young, aspirational foot soldiers presumably marching to economic glory -and our IT savvy . This resource must be channelled to profitable activity that beefs up national security at the same time. The onus is on the government to work out the projects, much as America's Defense Advanced Research Projects Agency (Darpa) does.

True, India has a demographic edge over many nations. But our future depends on how well policy addresses the needs of young people, how well we educate them and show them the way forward to address the prospects, and challenges, of the immediate future. Tackling cyber attacks might be a starting point. Boasting about Vedic mathematics misses the point.

Date: 13-06-16

Movement, At Last, on Cleaning Up Banks

Welcome move to convert debt into equity

The Reserve Bank of India's reported plan to get going on cleaning up banks' books laden with dud loans is welcome. There are many viable options of financial engineering. Pushing promoters of debt-ridden companies to slash their equity in stalled projects, with their creditor banks taking a haircut and getting a part of the debt converted into equity, as reported, is a workable one. Once right-sized, stalled projects can resume, with some infusion of funds, if necessary, and banks can start lending again. Banks can sell their stakes once the project takes off. This will enable banks to recoup the loans converted into equity. Ideally, stalled projects should be spun off into a special purpose vehicle when the loan is converted into equity, and project costs slashed to more realistic levels. This would facilitate induction of a fresh developer, if needed. A case-to-case approach to provide a lifeline to genuine defaulters is welcome. Any such move calls for government involvement. On their own, bankers will baulk at taking decisions that might result in the government auditor accusing them of causing losses. Now that the bankruptcy code provides a legal framework for resolution of corporate distress, the government should work on operationalising it fast. A systemic reform needed is to relieve a handful of bankers of the burden of making a judgement call on loans to infrastructure projects. That's not a happy state of affairs, besides the asset-liability mismatch in banks' funding of long gestation projects.

If infrastructure is financed by corporate bonds, a wider range of players such as rating agencies, mutual funds and pension funds will get to make an informed judgement. It will also help deepen and widen the market for corporate bonds. Also, the lending decision of banks could be tainted by the non-transparent way in which politics funds itself: through the proceeds of corruption. Dodgy projects get funded as political favours. The government must clean up political funding so that bank loans are not inflated to fund political parties.

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 13-06-16

भारत अमेरिका का रिश्ता हकीकत और वाकपटुता

श्याम सरन

भारत और अमेरिका की साझेदारी एक जटिल और अनिश्चित विश्व व्यवस्था में आकार ले रही है। इस संबंध में विस्तार से जानकारी दे रहे हैं श्याम सरन

वॉशिंगटन की अपनी ताजातरीन यात्रा के साथ प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अपने वैश्विक दृष्टिकोण में भारत-अमेरिका रिश्ते को केंद्रीय भूमिका प्रदान कर दी है। भारत की विदेश नीति में यह सामरिक बदलाव शीतयुद्ध के तत्काल बाद आना शुरू हो गया था। एक के बाद एक प्रधानमंत्रियों के कार्यकाल में यह आकार लेता गया। हालांकि इसका सबसे प्रखर स्वरूप अटल बिहारी वाजपेयी और मनमोहन सिंह के कार्यकाल में नजर आया। इस रिश्ते में ठंडेपन और झटकों के दौर आए होंगे लेकिन इसकी दिशा कभी नहीं भटकी। मोदी ने जो कुछ किया है वह अतीत की गतिविधियों से अलग नहीं। अमेरिकी कांग्रेस में अपने सुगठित भाषण में उन्होंने कहा भी कि हमारे रिश्ते ऐतिहासिक हिचकिचाहट से पार आ चुके हैं। उन्होंने यह भी माना कि अमेरिका भारत की आर्थिक ताकत और सुरक्षित राष्ट्र के रूप में बदलाव की प्रक्रिया का अपरिहार्य सहयोगी है। उन्होंने यह भी कहा कि भारत उभरती विश्व व्यवस्था को आकार देने में अहम भूमिका निभाने की क्षमता रखता है। मोदी ने अमेरिका को जो संदेश दिया उसका एक पाठ यह भी है कि अधिक जटिल और अनिश्चित दुनिया में जहां सापेक्षिक शक्तियां कमजोर पड़ रही हैं वहां भारत के साथ सामरिक साझेदारी अमेरिका के अपने हितों की मदद करेगी।

इस साझेदारी की तलाश में मोदी रणनीतिक समझौतों को तैयार नजर आ रहे हैं। कुछ अहम सिद्धांतों पर समझौते की हमारी इच्छा ने ही पेरिस जलवायु परिवर्तन समझौते पर आम सहमति की राह प्रशस्त की। भारत ने मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल में बदलाव का अपना पुराना विरोध त्याग दिया। अब वह अंतरराष्ट्रीय नागर विमानन संस्थान में विमानन क्षेत्र के उत्सर्जन पर चर्चा के लिए तैयार है। हमारा निरंतर यह कहना रहा है कि इन मसलों से संयुक्त राष्ट्र के जलवायु परिवर्तन ढांचे के अधीन निपटा जाना चाहिए क्योंकि इस मुद्दे पर किसी भी तरह के विमर्श के लिए वही एक मंच है। इन कदमों के चलते भारत को लेकर अमेरिका की उस धारणा में बदलाव आया है जिसके तहत वह हमें

जलवायु वार्ताओं को बाधित करने वाले देश के रूप में देखता था। इस बात ने कई साझा पहल को सकारात्मक रूप से प्रभावित किया है। ये पहल स्वच्छ एवं नवीकरणीय ऊर्जा क्षेत्र में हैं और देश की ऊर्जा सुरक्षा के लिहाज से खासी अहमियत रखती हैं। इस यात्रा ने दोनों देशों को असैन्य परमाणु समझौते के क्षेत्र में भी करीब किया है। भारतीय परमाणु ऊर्जा निगम और वेस्टिंगहाउस के बीच छह परमाणु रिएक्टरों के निर्माण की दिशा में काम करने की घोषणा को सकारात्मक परिणति माना जा सकता है।

हालांकि अभी भी कुछ जटिल मसले हो सकते हैं जिनका हल तलाशना जरूरी हो लेकिन फिलहाल तो इसे ही अच्छी खबर माना जा सकता है। रक्षा और सुरक्षा के इस युग में रिश्तों में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। भारत को प्रमुख रक्षा साझेदार करार दिया जाना भारत की राह सुगम करता है और इससे तय होता है कि वह अमेरिकी सहयोगी के रूप में अहम और संवेदनशील रक्षा तकनीक हासिल कर सकता है। इससे सरकार की स्वदेशी रक्षा उत्पादन और तकनीकी मंच तैयार करने की योजना को सफल बनाने में भी मदद मिल सकती है जो किसी भी बड़ी शक्ति की पहचान होती है। बहरहाल, इस कोशिश में हमारा सामना ऐसी शर्तों से पड़ सकता है जो ऐसी तकनीक की आपूर्ति के साथ अनिवार्य रूप से जुड़ी रहती हैं।

समुद्री क्षेत्र में दोनों देशों के बीच सुरक्षा सहयोग सर्वाधिक भविष्योन्मुखी नजर आ रहा है लेकिन वह मुख्य रूप से हिंद महासागर और एशिया प्रशांत क्षेत्र पर निर्भर है। इसकी वजह भी एकदम स्पष्टï है। एशिया प्रशांत क्षेत्र में चीन की बढ़ती आर्थिक और सुरक्षा क्षमताओं के मद्देनजर दोहरी प्रतिक्रिया आवश्यक है। इस क्षेत्र में प्रतिरोधात्मक सुरक्षा ढांचे की मौजूदगी आवश्यक है। केवल तभी चीन की ओर से किसी एकतरफा आक्रामकता को रोका जा सकेगा। साथ ही साथ यह इच्छा शक्ति भी होनी चाहिए कि चीन को किसी भी उभरते क्षेत्रीय सुरक्षा ढांचे में सहयोगी बनाया जा सके बशर्ते कि वह आपसी सुरक्षा की व्यवस्था में यकीन करना शुरू कर दे।

दोनों देशों के संयुक्त वक्तव्य में उस खाके को अंतिम रूप दिए जाने का स्वागत किया गया है जिसके तहत भारत अमेरिका एशिया प्रशांत और हिंद महासागर क्षेत्र के लिए संयुक्त नीतिगत दृष्टिï विकसित करने पर सहमत हुए थे। कहा जा रहा है कि यह व्यवस्था आने वाले वर्षों में देश के समुद्री सुरक्षा सहयोग को दिशा देगी। लेकिन इस बारे में कुछ ब्योरा नहीं दिया गया। इस मुद्दे पर संदेह दूर करने के लिए पारदर्शिता लाना आवश्यक है।

हो सकता है चीन किसी तरह के गठजोड़ के बजाय क्षेत्र में दबदबे को ही प्राथमिकता दे। परंतु उसे यह भी स्वीकार करना होगा कि हालांकि शक्ति संतुलन कुछ हद तक उसकी ओर खिसका है लेकिन इसके बावजूद उसे उस तरह का दबदबा हासिल होता नहीं दिखता जैसा अमेरिका ने दूसरे विश्वयुद्घ के बाद

कायम किया था। ऐसे गठजोड़ में भारत की भागीदारी चीन की भारत के प्रति शत्रुता को थामने का काम करेगी।

अच्छी बात है कि मोदी ने अमेरिकी कांग्रेस को यह याद दिलाया कि दोनों देशों के बीच कई मुद्दों पर मतांतर बना रहेगा, हालांकि उन्होंने उन विषयों का उल्लेख नहीं किया। पश्चिमी पड़ोसियों और पश्चिम एशिया को लेकर भारत का रुख अमेरिकी रुख से मेल नहीं खाता। इन बातों का ख्याल रखना होगा। आर्थिक और व्यापारिक रिश्ते अमेरिकी व्यापार प्रतिनिधियों, प्रभावशाली कारोबारी लॉबी और कांग्रेस के ऐसे धड़े के अधीन हैं जो भारत के बारे में विपरीत धारणा रखते हैं। सुरक्षा क्षेत्र में बढ़ती करीबी से इतर द्विपक्षीय और बहुपक्षीय व्यापारिक मसले अभी भी हल करने हैं। ओबामा ने भारत की एशिया प्रशांत आर्थिक समुदाय में भागीदारी की इच्छा का स्वागत किया है, वहीं उनके व्यापार प्रतिनिधि भारत के खिलाफ लॉबीइंग करने में व्यस्त रहे हैं। प्रस्तावित प्रशांत पार साझेदारी को लेकर भारत के पूर्वग्रह रहे हैं। लेकिन भविष्य को लेकर मुझे लगता है कि सुरक्षा और आर्थिक रिश्तों का असंतुलन समस्या बन सकता है। दोनों देशों को इस दिशा में मिलकर काम करना होगा। यह यात्रा ऐतिहासिक रही है लेकिन इस पर अमेरिकी राष्ट्रपति चुनाव के लिए चल रहे खासे कटु और ध्रुवीकृत प्रचार अभियान की छाया रही। यह जोखिम तो बना ही रहेगा कि नए अमेरिकी प्रशासन के अधीन दोनों देश के रिश्ते क्या मोड़ लेते हैं।(लेखक पूर्व विदेश सचिव और आरआईएस के चेयरमैन हैं। लेख में प्रस्तुत विचार निजी हैं।)

दैनिक जागरण

Date: 13-06-16

चीन की जकड़ में पाकिस्तान

जबसे चीन शक्तिशाली हो गया है तबसे वह न सिर्फ पक्षपाती हो गया है, बल्कि एक मित्रहीन देश की तरह पेश आने लगा है। हाल ही में जब उसने अपने पूर्व सहयोगी उत्तर कोरिया के खिलाफ नए अंतरराष्ट्रीय प्रतिबंधों को अनुमति देने के लिए संयुक्त राष्ट्र में अमेरिका का साथ दिया तो इस संदेह को पुन: बल मिला कि उसका पाकिस्तान ही एकमात्र

सहयोगी है। भारत के प्रति चीन और पाकिस्तान की साझा दुश्मनी अंतरराष्ट्रीय कूटनीति में सबसे करीबी और स्थायी संबंधों में से एक है। हालांकि इस संबंध ने पाकिस्तान को चीन का उपभोक्ता और बलि का बकरा बना दिया है। वास्तव में पाकिस्तान के जिहादी चेहरे ने चीन को यह अवसर मुहैया कराया है कि वह वहां अपनी रणनीतिक घुसपैठ में वृद्धि कर सके। पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर में अपने हजारों सैनिकों को तैनात करने के बाद बीजिंग अरब सागर और हिंदू महासागर तक सीधी पहुंच बनाने के लिए पाकिस्तान को एक स्थल कोरिडोर के रूप में बदलने में लगा है।

बीजिंग पाकिस्तान को अपने हर सुख-दुख का साथी बताता है। लंबे समय से वे अपने संबंधों को पर्वतों से भी ऊंचा, महासागरों से भी गहरा, स्टील से भी मजबूत और शहद से भी मीठा जैसे लच्छेदार शब्दों के जरिये व्यक्त करते रहे हैं। चीन और पाकिस्तान में बहुत कम समानता है, सिवाय इसके कि दोनों संशोधनवादी देश हैं और अपनी मौजूदा सीमाओं के साथ संतुष्ट नहीं हैं। पाकिस्तान जहां विदेशी खैरात पर निर्भर है वहीं चीन का विदेशी मुद्रा कोष लबालब भरा हुआ है। अभी तक दोनों की साठगांठ उनके इसी सिद्धांत पर टिकी है कि मेरे दुश्मन का दुश्मन मेरा प्रिय दोस्त है। दरअसल पाकिस्तान चीन का एक सहयोगी होने से अधिक एक ग्राहक अथवा उपभोक्ता देश है। हाल ही में जारी हुई पेंटागन रिपोर्ट कहती है कि पाकिस्तान, जो कि चीन के परंपरागत हथियारों का प्रमुख उपभोक्ता है, अपने यहां चीनी नौसेना का एक केंद्र तैयार करना चाहता है, ताकि वह हिंदू महासागर क्षेत्र में अपनी ताकत का प्रदर्शन कर सके। यह चीन ही था जिसने अमेरिकी प्रतिबंध या भारतीय संबंधों की परवाह किए बगैर पाकिस्तान को परमाणु हथियारों का जखीरा तैयार करने में मदद की थी। इसके अलावा वह पाकिस्तान को गुप्त तरीके से परमाणु बम बनाने और मिसाइल तैयार करने में सहयोग दे रहा है।

चीन ने भी परिस्थितियों का लाभ पाक को अपने पुराने परमाणु रिएक्टरों और चीनी सैनिकों द्वारा छांट दी गई प्रोटोटाइप हथियार प्रणालियों को बेचने के लिए उठाया है। चीन कराची के समीप दो एसी-1000 रिएक्टरों का निर्माण कर रहा है, जिनका मॉडल फ्रेंच डिजाइन के अनुकूल है, लेकिन चीन ने अपने यहां अभी इस मॉडल को लागू नहीं किया है। विशेषज्ञों ने आशंका व्यक्त की है कि बड़े पैमाने पर चीन की सामरिक परियोजनाएं पाक को चीन के नवीनतम उपनिवेश में बदल रही हैं। इन परियोजनाओं का विस्तार 46 अरब डॉलर की

लागत वाले चीन-पाक आर्थिक कोरिडोर से लेकर चीनी हाईवे, बांध निर्माण और विवादित कश्मीर तक में है। यह आर्थिक कोरिडोर चीन के शिनजियांग क्षेत्र को पाकिस्तान के ग्वादर बंदरगाह से जोड़ेगा, जिसका निर्माण चीन द्वारा किया जा रहा है। चीन ने पाकिस्तान को अपने सिल्क रोड उपक्रम की केंद्रीय धुरी बना रखा है।

इस कोरिडोर की मदद से मध्य-पूर्व तक चीन की दूरी 12000 किलोमीटर तक कम हो जाएगी और हिंदू महासागर तक उसकी पहुंच हो जाएगी, जहां वह भारत को चुनौती देने की स्थिति में आ जाएगा। गत वर्ष चीनी राष्ट्रपति शी चिनफिंग के पाकिस्तान दौरे के दौरान दोनों देशों में हुए तमाम सौदों ने बीजिंग के साम्राज्यवादी दृष्टिकोण को रेखांकित किया। उन सौदों में 1.4 अरब डॉलर की लागत से करोट बांध सहित आर्थिक कोरिडोर के निर्माण से लेकर नई बिजली परियोजनाओं के विकास की बात शामिल की गई। आर्थिक कोरिडोर का निर्माण सिल्क रोड फंड के तहत चीन करेगा। बिजली परियोजनाओं पर भी चीन का अधिकार होगा। यह कोरिडोर चीन के आर्थिक और सुरक्षा ग्राहक के रूप में पाकिस्तान की पहचान को और सुदृढ़ करेगा।

इस तरह पूरे पाकिस्तान पर चीन की मजबूत होती पकड़ पाकिस्तान को बीजिंग के चंगुल से म्यांमार और श्रीलंका के निकलने के उदाहरण का अनुसरण करने से रोकेगी। इन सौदों और रियायतों के बदले में चीन पाकिस्तान को सुरक्षा आश्वासन और राजनीतिक संरक्षण खासकर संयुक्त राष्ट्र में कूटनीतिक कवच प्रदान कर रहा है। इसका एक हालिया उदाहरण तब देखने में आया जब चीन ने पाकिस्तान आधारित आतंकी संगठन जैश ए मोहम्मद के प्रमुख मसूद अजहर के खिलाफ संयुक्त राष्ट्र के प्रस्ताव को वीटो कर दिया था। गत महीने ही पाकिस्तानी प्रधानमंत्री के विदेश मामलों के सलाहकार सरताज अजीज ने कहा था कि चीन ने भारत को अमेरिका के समर्थन से परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह का सदस्य बनने से रोकने में पाकिस्तान की मदद की है। चीन के ये कदम पाकिस्तान को खुश करने के लिए हैं। चीन के अहसानों तले दबे पाकिस्तान ने उसे ग्वादर बंदरगाह को 40 सालों तक चलाने के लिए विशेष अधिकार दे रखा है, जिसके आने वाले दिनों में चीनी नौसेना के अड्डे में बदलने की संभावना है। दरअसल पाकिस्तान ने विशेष रूप से चीन द्वारा बनाए जा रहे कोरिडोर की सुरक्षा के लिए करीब 13000 जवानों से लैस एक नई आर्मी डिवीजन का गठन किया है।

इसके साथ ही जनजातीय अतिवादियों और इस्लामिक बंदूकधारियों से चीनी नागरिकों और निर्माण स्थलों को बचाने के लिए पाकिस्तान ने पुलिस बल भी तैनात कर रखा है।

कुछ साल पहले जब चीन ने कोरिडोर योजना की नींव रखी तो उसके बाद से ही उसने पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर में अपने सैनिकों की तैनाती आरंभ कर दी। उसकी मंशा पहाड़ी क्षेत्रों में अपनी रणनीतिक परियोजनाओं को सुरक्षित करना है। पाकिस्तान की सुरक्षा व्यवस्था में जिस तरह आत्मविश्वास का अभाव नजर आ रहा है उससे लग रहा है कि आने वाले दिनों में चीन पाकिस्तान में अपने सैनिकों की संख्या बढ़ा सकता है, खासकर ग्वादर के आसपास के इलाकों में। सच्चाई यह है कि अमेरिका मदद के नाम पर अरबों डॉलर की राशि पाकिस्तान की झोली में डाल रहा है तो दूसरी ओर चीन अपनी कारगुजारियों से इसे अपनी रियासत का हिस्सा बनाता जा रहा है। लेकिन जिस तरह से पाकिस्तान चीन की क्षेत्रीय महत्वाकांक्षाओं को साधने का एक जरिया बना है, कुछ ही समय की बात है जब उसे लगेगा कि उसका संरक्षक ही उसे परेशान कर रहा है।

(लेखक संेटर फॉर पालिसी रिसर्च में प्रोफेसर हैं)

जनसत्ता

Date: 12-06-16

तालीम की कमजोर बुनियाद

तवलीन सिंह

नई शिक्षा नीति का लक्ष्य होना चाहिए देश भर में सरकारी स्कूलों का स्तर केंद्रीय विद्यालयों तक पहुंचाना। मुश्किल नहीं है यह, क्योंकि अगर कुछ सरकारी स्कूल इतने अच्छे हो सकते हैं तो क्यों नहीं सारे अच्छे हो सकते हैं।

छोटी-सी खबर छपी थी अखबारों में पिछले सप्ताह, लेकिन पढ़ते ही मैं चौंक गई। खबर थी कि मोदी सरकार ने फैसला किया है कि देश भर में संस्कृति स्कूल बनाए जाएंगे, ताकि हमारे बड़े साहब जब दिल्ली से ट्रांसफर होकर किसी राज्य की राजधानी में जाएं, तो उनके बच्चों की पढ़ाई को कोई नुकसान न पहुंचे। खबर में यह भी लिखा था कि हमारे आला अधिकारी दिल्ली छोड़ना इसलिए नहीं पसंद करते हैं कि यहां संस्कृति स्कूल है, जहां शिक्षा इतने ऊंचे स्तर की है कि वहां से केंद्रीय विद्यालों में जाना उनके बच्चों को अच्छा नहीं लगता। यही वजह है कि केंद्र सरकार के कई अधिकारी अपने परिवार दिल्ली में ही छोड़ कर अकेले चले जाते हैं लखनऊ, भोपाल या जयपुर। फिर समस्या यह भी है कि बिना बाल-बच्चों के इनका दिल नहीं लगता नए शहर में। अब सुनाती हूं आपको संस्कृति स्कूल की कहानी, इस उम्मीद से कि जब आप सुनेंगे तो शायद आपको इन अधिकारियों पर तरस आने के बदले गुस्सा आएगा। संस्कृति स्कूल दिल्ली में 1998 में बनाया गया था जनता के पैसों से जनता की जमीन पर और जब इस स्कूल में अटल बिहारी वाजपेयी ने अपनी नवासी को भेजा तो इसकी शोहरत इतनी बढ़ गई कि शायद ही कोई राजनेता या आला अधिकारी रह गया है दिल्ली में जो अपने बच्चे या अपने पोते-दोहते इस स्कूल में दाखिल न करा चुका हो। वर्तमान स्थिति यह है इस स्कूल की कि अगर कोई आम इंसान अपने बच्चों को यहां भेजना चाहे तो तभी यह मुमकिन होता है जब किसी नेता या बाबू की सिफारिश हाथ में हो। लंबी पहुंच के बिना मुश्किल नहीं, नामुमकिन है दाखिला लेना। जब देश पर राज था भारत के राजघराने का, तो इस तरह की संस्कृति-सभ्यता हम चुपके से बर्दाश्त कर लिया करते थे, लेकिन अब प्रधानमंत्री की जगह प्रधान सेवक हैं, सो क्यों जनता के सेवकों की सुविधा के लिए कई सारे संस्कृति स्कूल बनाने का फैसला किया है केंद्र सरकार ने? इस सवाल का जवाब जानने के लिए मैंने फोन किया मानव संसाधन विकास मंत्री स्मृति ईरानी को, तो मालूम हुआ कि उनके मंत्रालय ने ऐसा फैसला नहीं किया है, बावजूद इसके कि शिक्षा नीति इस मंत्रालय की जिम्मेवारी है। स्मृतिजी ने बल्कि यह भी बताया कि उन्होंने अपने बच्चों को संस्कृति स्कूल में नहीं डाला है, क्योंकि उनको बिल्कुल पसंद नहीं है इस किस्म की 'इलीट' शिक्षा। 'मेरे बच्चे पढ़ते हैं एक मध्यवर्गीय स्कूल में और मैं अपनी तरफ से केंद्रीय विद्यालयों को बेहतर बनाने की हर कोशिश कर रही हूं।' थोड़ी और तहकीकात करने के बाद मालूम हुआ कि संस्कृति स्कूलों की संख्या बढ़ाने का फैसला आया है भारत सरकार के कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग से। इस विभाग की वेबसाइट पर गई तो परिवर्तन और

विकास की खूब चर्चा मिली, लेकिन संस्कृति स्कूलों के निर्माण का जिक्र तक नहीं। यह अच्छी बात है, क्योंकि अगर इस योजना की अभी तक शुरुआत भी नहीं हुई है, तो प्रधानमंत्रीजी प्लीज इसको अभी से रुकवा दें और एक नई शिक्षा नीति की तैयारी में व्यक्तिगत तौर पर दखल दें। नई शिक्षा नीति इसलिए जरूरी है कि सोनिया-मनमोहन सरकार के दौर में जो शिक्षा का अधिकार कानूनी तौर पर दिया गया, वह पूरी तरह नाकाम साबित हुआ है। भारत के बच्चों को शिक्षा का अधिकार देने का मकसद था गरीब बच्चों को उत्तम स्तर के स्कूलों में आसानी से दाखिल होने का हक और सरकारी स्कूलों को भी बेहतर बनाना। ऐसा हुआ नहीं है। उलटा यह हुआ कि कोई दस हजार प्राइवेट स्कूलों को बंद करना पड़ा, क्योंकि वे नए नियम पूरा नहीं कर पाए। जो प्राइवेट स्कूल बचे हैं उनमें पच्चीस फीसद सीटें आरक्षित तो हैं कमजोर वर्ग के बच्चों के लिए, लेकिन सीटों का इतना अभाव है कि इसमें भी हेरा-फेरी चल रही है। रही बात सरकारी स्कूलों के बेहतर होने की, तो ऐसा कहीं पर नहीं हुआ बावजूद इसके कि सरकारी स्कूलों के अध्यापकों की तनख्वाह आजकल इतनी बढ़ गई है कि वे प्राइवेट स्कूलों से ज्यादा पाते हैं कई राज्यों में। नई शिक्षा नीति का लक्ष्य होना चाहिए देश भर में सरकारी स्कूलों का स्तर केंद्रीय विद्यालयों तक पहुंचाना। मुश्किल नहीं है यह, क्योंकि अगर कुछ सरकारी स्कूल इतने अच्छे हो सकते हैं तो क्यों नहीं सारे अच्छे हो सकते हैं। स्मृतिजी से जब मेरी बात हुई तो उन्होंने यह भी बताया कि केंद्रीय स्कूलों के बच्चे इन दिनों प्राइवेट स्कूलों के बच्चों से अच्छा करते हैं परीक्षाओं में। नई नीति का दूसरा लक्ष्य होना चाहिए शिक्षा विभाग में लाइसेंस राज का खात्मा। इस लाइसेंस राज के होते हुए अधिकारियों को इजाजत है शिक्षा संस्थाओं के हर काम में टांग अड़ाने की और इससे खुल जाते हैं भ्रष्टाचार के कई दरवाजे। समस्या यह भी है कि लाइसेंस उन्हीं को मिलते हैं, जिनकी लंबी पहुंच है, तो शायद ही कोई राजनेता है आज, जिसको स्कूल या कॉलेज खोलने के बहाने महंगी से महंगी सरकारी जमीन न मिल गई हो। गरीबी हटाने के लिए सबसे शक्तिशाली औजार अगर है कोई तो वह है शिक्षा, लेकिन इस औजार को हमारे शासकों ने गरीबों को इसलिए शायद नहीं दिया है कि जब गरीबी रेखा से ऊपर उठ कर आते हैं मध्यवर्ग में मतदाता, तो बहुत सोच-समझ कर वोट देते हैं। वरना क्या कारण है कि भारत जैसे समाजवादी देश में अभी तक अशिक्षित हैं करोड़ों गरीब लोग? अन्य समाजवादी देशों में सबसे बड़ी सफलताएं दिखती हैं शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में।

Date: 12-06-16

अंकों की दौड़ में प्रतिभा का अवमूल्यन

जगमोहन सिंह राजपूत

अगर इस प्रकार के स्कूल स्थापित हों और लगातार इनकी संख्या बढ़ती रहे तो अनेक दृष्टिकोण परिवर्तन संभव हो सकेंगे।

हर साल की तरह इस बार भी बोर्ड परीक्षाओं के परिणाम घोषित और चर्चित हुए। एक तरफ ऊंचे और अच्छे अंक प्राप्त करने वाले विद्यार्थी और उनके परिवार सफलता का समारोह पूर्वक आनंद लेते हैं, तो दूसरी तरफ अधिकतर विद्यार्थी जो उम्मीद के अनुरूप अंक और श्रेणी प्राप्त नहीं कर पाते, अनेक बार हताशा की स्थिति में पहुंच जाते हैं। अवसाद की यह अवस्था उन्हें अनेक वर्षों तक घेरे रह सकती है और आत्महत्या तक के प्रकरण इसी का परिणाम होते हैं। इधर एक अन्य आश्चर्यजनक स्थिति यह आई है कि अवसाद की अवस्था में पहुंचने वालों में वे विद्यार्थी भी शामिल हैं, जिन्होंने परीक्षा में प्रथम श्रेणी और उसमें भी काफी ऊपर अंक प्राप्त किए होते हैं, मगर जानते हैं कि अब इन अंकों में भी उन्हें उच्च शिक्षा में अपने मनचाहे पाठ्यक्रम या संस्था में प्रवेश दिलाने का दम नहीं बचा है। आज से पचास साल पहले प्रथम श्रेणी प्राप्त करना अपने आप में बहुत बड़ी उपलब्धि मानी जाती थी, मगर आज उपलब्धि तब मानी जाती है जब बच्चे के अंक अट्ठानबे-निन्यानबे प्रतिशत से अधिक हों! ऐसी स्थिति में भी यह नहीं कहा जा सकता कि ऐसे विद्यार्थी को वह महाविद्यालय या विश्वविद्यालय मिल ही जाएगा, जिसमें वह प्रवेश चाहता है! इधर अधिक अंक प्राप्त करने वालों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है और इससे अनेक प्रकार की समस्याएं पैदा हो रही हैं, जिनमें सबसे प्रमुख उच्च और व्यावसायिक शिक्षा में प्रवेश प्राप्त करने को लेकर पैदा हो रही हैं। बड़ा प्रश्न यह है कि इसके समाधान के लिए क्या किया जा सकता है? सबसे पहले सीबीएसइ को लेकर चर्चा करना तर्कसंगत होगा, क्योंकि इसी बोर्ड से देश के सारे अन्य बोर्ड दिशा-निर्देश और प्रेरणा लेते हैं। इसकी अपनी साख बची हुई है और इसके स्तर को सारे देश में सराहा जाता है। यह अपेक्षा की जाती है कि शिक्षा के क्षेत्र में जो कुछ राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर नया होगा, उपयोगी होगा, सीबीएसइ उसका अध्ययन

करेगा और अपने पाठ्यक्रम में उचित परिवर्तन करेगा तथा अन्य बोर्डों के सामने उसे विचार के लिए प्रस्तुत करेगा। अपेक्षा तो यही है कि एनसीइआरटी जैसी संस्थाओं से संपर्क स्थापित कर सीबीएसइ शैक्षिक समस्याओं का समाधान निकालने के लिए नवाचार, शोध और सर्वेक्षण करेगा तथा अन्य को करने को प्रेरित करेगा। 2004 के बाद यह संस्था नौकरशाही के आधिपत्य में ही चली है और इसके अपने मूल और मुख्य उद्देश्य इसी के सामने धुंधले हो गए हैं। इधर इस संस्था को राष्ट्रीय स्तर पर अनेक प्रकार की प्रवेश और योग्यता परीक्षाएं लेने का उत्तरदायित्व सौंपा गया है। स्पष्ट है कि इसका ध्यान इन्हीं पर अधिक केंद्रित होकर रह गया है, जिससे उसके निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति में बाधा पड़ी है। इसकी अपनी परीक्षा को लेकर इस पर 2004 के बाद मंत्रालय से लगातार दबाव डाला गया कि बच्चों पर 'बस्ते का बोझ' कम किया जाए, परीक्षा के महीनों पहले से जो तनाव बच्चों पर आ जाता है उसे भी कम किया जाए। इस सब पर शैक्षिक और शोध आधारित फैसले करने के स्थान पर सीबीएसइ ने सबसे अधिक अपेक्षित परिणाम देने वाला रास्ता चुना- उसने ऐसे प्रश्नपत्र तैयार कराए, जिन्हें बिना तनाव के हल किया जा सके! उसी निर्णय का परिणाम है कि बोर्ड परीक्षा में अब नब्बे प्रतिशत से ऊपर अंकों की चमक फीकी पड़ गई है। इसके अनेक प्रकार के अस्वीकार्य प्रभाव पड़ रहे हैं। ट्यूशन पर जोर बढ़ा है और कोचिंग संस्थान चांदी काट रहे हैं, जिनमें गए बच्चे लगातार आत्महत्याएं करने को मजबूर हो रहे हैं। परीक्षा परिणामों के बाद मीडिया आनन-फानन 'टापर्स' के घर पहुंचता है। केवल अंकों को ही संपूर्ण शिक्षा मान कर वह यह पूरी तरह भुला देता है कि प्रथम स्थान पाने वाला ही सर्वश्रेठ विकसित व्यक्तित्व का उदाहरण भी हो ऐसा आवश्यक नहीं है। सीबीएसइ इस दिशा में कार्य कर सकता है कि श्रेष्ठता का आधार केवल अंक नहीं होंगे, व्यक्तित्व विकास के अन्य आयाम भी इसमें योगदान करेंगे और हो सकता है केवल सत्तर-पचहत्तर प्रतिशत अंक पाने वाला सर्वश्रेष्ठ व्यक्तित्व का धनी हो, मगर अपनी रुचि के क्षेत्र जैसे संगीत, खेल, साहित्य में अपनी श्रेष्ठता स्थापित कर चुका हो, जिसका आचार, विचार, व्यवहार सर्वप्रिय रहा हो! उसे ही टॉपर क्यों न घोषित किया जाए! ऐसा करने के लिए ठोस अकादमिक और शैक्षिक आधार के साथ-साथ पूर्ण व्यक्तित्व विकास के अनेक आयामों को भी निर्मित कर महत्व देना होगा। वैसे उन बच्चों को आवश्यक सुविधाएं देने का प्रावधान प्रारंभ से ही होना चाहिए, जिनकी विशेष रुचि खेलों में, संगीत, साहित्य, कलाओं और हस्त कौशल में पहचानी जा चुकी हो। देश को हर क्षेत्र में प्रतिभाशाली युवाओं की आवश्यकता है और ऐसी प्रतिभाओं के विकास को

हतोत्साहित करने वाली अधिक अंकों की दौड़ से बचाना ही होगा। इसके लिए देश में संगीत स्कूल, भौतिकी स्कूल, कविता स्कूल, कला स्कूल, और ऐसे ही विषयों के नवोदय विद्यालय की संरचना के आधार पर विशेष स्कूल खोल कर प्रतिभावान बच्चों को वहां लाकर उनका पूरा भार उठाना चाहिए। यहां बच्चे स्कूल बोर्ड का सारा पाठ्यक्रम वैसे ही पढ़ेंगे जैसे अन्य स्कूलों में पढ़ाया जाता है। इसके साथ-साथ वे अपनी रुच विशेष के क्षेत्र में अलग से प्रवीणता हासिल करने की सब सुविधाएं भी प्राप्त कर सकेंगे। अगर देश में पांच वर्ष तक प्रतिवर्ष ऐसे सौ स्कूल खोलें जाएं तो इसके दूरगामी सार्थक परिणाम कुछ ही वर्षों में सबके सामने होंगे। इन चयनित बच्चों को नवाचार करने, प्रयोग करने, मूर्धन्य विद्वानों से संपर्क करने के अवसर आसानी से प्रदान किए जा सकते हैं। इनकी जिज्ञासु प्रवृत्ति को पंख मिलेंगे और इनकी सर्जनात्मकता अंकों के बोझ तले दब कर पंगु नहीं होगी। प्रतिभा विकास के लिए वातानुकूलित स्कूल और बसों की आवश्यकता नहीं होती, उसके लिए पसीना बहाने की क्षमता को पहले विकसित करना होता है। समाज के हर तबके को जानने, समझने और उससे संवेदनात्मक स्तर पर जुड़ने की आवश्यकता भी चाहिए। एक अच्छे स्तर पर केंद्रीय विद्यालय और नवोदय विद्यालय इसकी पुष्टि करते हैं। इस समय देश को इस से अधिक सुविधा-संपन्न विद्यालयों की कोई आवश्यकता नहीं है। चुनौती तो यह है कि हर सरकारी स्कूल को इस स्तर तक लाया जाए। अगर इस प्रकार के स्कूल स्थापित हों और लगातार इनकी संख्या बढ़ती रहे तो अनेक दृष्टिकोण परिवर्तन संभव हो सकेंगे। माता-पिता मेडिकल, इंजीनियरिंग, सिविल सर्विस के अलावा अन्य विकल्प भी तलाशेंगे। वे अपनी महत्त्वाकांक्षा बच्चों पर लादने पर कई बार सोचेंगे। ट्यूशन का बढ़ता खेल कमजोर पड़ेगा। बच्चों को भयभीत करने वाले कोचिंग उद्योग की रफ्तार धीमी तो पड़ ही जाएगी। प्राइवेट स्कूलों में प्रवेश की जो मारामारी बढ़ रही है उससे भी लोगों को विरक्ति होगी। सरकारी स्कूलों के अध्यापक इन स्कूलों में प्रवेश के लिए विद्यार्थियों को तैयार करने में रुचि लेंगे और उन्हें इसमें सफलता के लिए पुरुष्कृत भी किया जा सकता है। ऐसी किसी भी परियोजना निर्माण और क्रियान्वयन के लिए साहसी निर्णय की आवश्यकता होगी।